इकाई 1 स्कन्द, नारायण, उद्‌गीथ

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्‌देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 स्कन्दस्वामी

1.2.1 स्कन्दस्वामी के प्रमुख ग्रन्थ

1.2.2 स्कन्दस्वामी की भाष्य–पद्धति

1.3 नारायण

1.3.1 नारायण के प्रमुख ग्रन्थ

1.3.2 नारायण की भाष्य–पद्धति

1.4 उद्‌गीथ

1.4.1 उद्‌गीथ का मन्त्रार्थ दृष्टि

1.4.2 उद्‌गीथ की भाष्य–पद्धति

1.5 सारांश

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

1.7 संस्तुत पुस्तकें

1.8 बोध प्रश्न

1.0 उद्‌देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- ऋग्वेद के ज्ञात प्राचीन भाष्यकार स्कन्दस्वामी की बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- स्कन्दस्वामी के सहकारी नारायण तथा उद्‌गीथ के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगें।
- स्कन्द, नारायण, उद्‌गीथ के भाष्यों तथा उनकी विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे।
- स्कन्द, नारायण, उद्‌गीथ द्वारा वेद भाष्य के क्षेत्र में किये गये अवदान से परिचित हो सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

वेद के स्वरूप में ऋक् संहिता को सर्वाधिक महत्त्व प्राप्त है। वेद के मूल संरचना की भाष्य लिखने की परम्परा हमें सातवीं शताब्दी से प्राप्त होने लगती हैं इस ज्ञात परम्परा में स्कन्दस्वामी, नारायण एवम् उद्‌गीथ सबसे प्राचीन है। सायण, देवराज, आत्मानन्द प्रभृत सभी ही आचार्यों ने इन्हें विशेषकर स्कन्दस्वामी को अपने भाष्यों में उद्‌धृत किया है। वैदिक साहित्य के अन्तर्गत संहिता काल के पश्चात् ब्राह्मण साहित्य का काल आता है। इस काल के आते–आते वेद मन्त्रों का अभिप्राय धूमिल होने लगा था, ऐसा हमें ब्राह्मण ग्रन्थों के अध्ययन से तथा वहाँ किये गये निर्वचन, मन्त्र विनियोग तथा अर्थवाद के प्रयोगों से ज्ञात होता है। इन सभी प्रक्रियाओं में हम धूमिल होते हुए वेदार्थ

के प्रकाशन का प्रयत्न देखते हैं।

बाद में जब यह स्थिति और दूर होने लगी तब वेदार्थ के ज्ञान के लिए तत्कालीन ऋषियों ने वेदाङ्गसाहित्य का प्रणयन किया। इस साहित्य में वेद मन्त्रों के उच्चारण प्रक्रिया को समझने से लेकर याज्ञिक विधि विधानों के स्वरूप आदि तथा पद पदार्थादि के विवेचन करने वाले ग्रन्थ सूत्र शैली में प्रणीत हुए।

वस्तुतः वेदाङ्गसाहित्य का प्रणयन उसमें भी विशेषतः निरुक्तशास्त्र, वेदार्थ की प्रक्रिया को समझने का प्रथम तथा व्यवस्थित प्रयास था। उसके बाद वेद भाष्य की परम्परा आती है। वेदार्थ को ज्ञात करने में इन भाष्यों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है।

इसके पश्चात् वेदार्थ के सहायक ग्रन्थों के रूप में अनुक्रमणी साहित्य का प्रणयन हुआ। उसके बाद लौकिक साहित्य का प्रचलन होने से वेद तथा उससे सम्बद्ध साहित्य धीरे–धीरे पठन पाठन का विषय कम श्रद्धा और पूजा का विषय अधिक हो गया। अतः वेदार्थ के प्रसंग में बहुत समय तक किसी आचार्य ने अपनी लेखनी नहीं उठाई। आचार्य यास्क का समय ई.पू. ६००–७०० स्वीकार किया जाता है। इस प्रकार उनके बाद लगभग १२००–१३०० वर्ष तक वेदार्थ के सन्दर्भ में कुछ विशिष्ट कार्य नहीं हुआ और यदि हुआ भी हो तो ज्ञात नहीं है।

1.2 स्कन्दस्वामी

जैसा कि आप पढ़ चुके हैं कि वेदों के अर्थ ऋषियों को बिल्कुल ही स्पष्ट था किन्तु बाद में वेदार्थ की प्रक्रिया प्रारम्भ होती हैं जो ब्राह्मण ग्रन्थ, वेदाङ्गों के द्वारा वेदार्थ सामने आयी जिनमें विशेषकर शिक्षाग्रन्थ एवम् निरुक्त उपयोगी हुआ इसके बाद वेदार्थ के अनुक्रमणी साहित्य का प्रणयन हुआ। 12वीं शताब्दी के आस–पास के वेदाभाष्यकार वेंकटमाधव ने लिखा है–

भाष्याणि वैदिकान्याहुरार्यावर्तनिवासिनः।
क्रियमाणान्यपीदानीं निरुक्तनीति माधवः।।

स्कन्दस्वामी नारायण उद्गीथ इति ते क्रमात्
चक्रुः सहैकमृग्भाष्यं पद वाक्यार्थगोचरम्।।

अर्थात् स्कन्दस्वामी नारायण और उद्गीथ ने मिलकर एक ऋग्वेद – भाष्य रचा। स्कन्द पहले भाग पर नारायण मध्यभाग पर तथा उद्गीथ अन्तिम भाग पर लिखा गया। उसके बाद लौकिक साहित्य के आने से वैदिक साहित्य धीरे–धीरे श्रद्धा का विषय बनता चलता गया। अतः वेदार्थ के सन्दर्भ में आचार्य लेखनी नहीं उठाये कालान्तर में आचार्य यास्क ने, जिनका काल 600–700ई0 पू0 माना जाता है, निरुक्त–भाष्य लिखा। यास्क के लगभग 1300 वर्ष पश्चात् लगभग 625ई0 में स्कन्द ने उनके निरुक्त–भाष्य पर टीका लिखने के साथ–साथ ऋग्वेद पर भाष्य लिखा। ऋग्वेद भाष्य को स्कन्दस्वामी ने नारायण तथा उद्गीथ की सहायता से लिखा था। अब आप स्कन्दस्वामी का जीवन परिचय पढ़ेगें।

आपसे यह बताया जा चुका है कि स्कन्दस्वामी ऋग्वेद के ज्ञात सभी भाष्यकारों में सबसे प्राचीन हैं। स्कन्दस्वामी गुजरात के वलभी के निवासी थे। वेदभाष्यकार सायण, देवराजयज्वा, आत्मानन्द, वेङ्कटमाधव प्रभृत सब ही आचार्यों ने अपने–अपने भाष्यों में स्कन्दस्वामी को उद्धृत किया है। इन आचार्यों के बारे में आप आगे पढ़ने वाल हैं।

वेंकट माधव के भाष्य से तो यह ज्ञात होता है कि स्कन्दस्वामी ने ऋग्वेद भाष्य की रचना चार ही अष्टक तक की थी और शेष अंशों की पूर्ति नारायण तथा उद्गीथ द्वारा हुई।

स्कन्दस्वामी नारायण उद्गीथ इति ते क्रमात्।
चक्रु–सहैकमभाष्य पादावाक्यार्थेगोचरम्।।

इस कथन से यह तथ्य की पुष्टि हो जाती है।

महेश्वर जोकि निरुक्त के भाष्यकार हुए। उनका वेदभाष्य उपलब्ध नहीं होता। निरुक्त के इनके भाष्य को स्कन्दस्वामी के भाष्य के साथ जोड़ा जाता है। इनके काल को लेकर मतभेद है। डॉ0 उमा शर्मा ने इनका काल 1500ई0 माना है जबकि भगवद् दत्त ने उन्हें स्कन्द का शिष्य माना है। उन्होंने स्कन्दस्वामी के भाष्य होने की सूचना दी है।

स्कन्दस्वामी का काल : विद्वानों ने स्कन्दस्वामी का काल लगभग संवत् 687 अथवा 630 माना है। हरिस्वामी जोकि शतपथ ब्राह्मण के भाष्यकार है, अपने शतपथ ब्राह्मण के भाष्य के अन्त में स्वयं के काल के बारे में जो कुछ लिखा है, उसी हरिस्वामी के काल के आधार पर स्कन्दस्वामी का काल का अनुमान विद्वान् लगाते हैं। स्कन्दस्वामी का समय पंचम शताब्दी ई0 पश्चात् का अथवा षष्ठ शताब्दी का प्रारम्भ माना जा सकता है। वैसे सीधे–सीधे स्कन्द स्वामी के काल के बारे में कुछ ठोस प्रमाण नहीं मिलता। इसलिये स्कन्दस्वामी के काल इन्हीं अनुमानों के आधार पर ज्ञात करते हैं। स्कन्दस्वामी का काल हरिस्वामी के काल पर निर्भर है।

हरिस्वामी जी का काल : 630 वर्ष का था। डॉ0 लक्ष्मणस्वरूप ने हरिस्वामी का भाष्य रचनाकाल 538 ईसा0 निर्धारित है, वे लिखते हैं–

The commentary of Hariswami was composed when 1740 years of the Kali era has passed. This gives 538A.D. as the date of commentary of Hariswami as the kali era began on the 18th of February 3202 B.C. The Vikrama mention inverse I was evidently Yashodharman of Malwa who defeated. Mihiragula in 528 A.D. and Assumed the title of Vikramaditya.

लक्ष्मण 320 पूर्व ईसा से कलि संवत् का आरम्भ मानते हैं किन्तु इसे अन्य विद्वान नहीं मानते। वे स्कन्द का भाष्य करने का काल 630 सन् ईसा ही उचित मानते हैं। इतना ही नहीं स्कन्दस्वामी को प्राचीन भाष्यकार के रूप में सायण (1377–1444 संवत्) ने भी स्वीकार किया है। अपने ऋग्वेदभाष्य में वे इनके नाम का उल्लेख करते हैं इस मत के पक्ष में एक उदाहरण देख सकते हैं–

वराहून वरशब्दोपपदाङ्गपूर्वाद्धन्तेर्वा, हरतेर्वा, हव्यतेर्वा, जुहोतेरदनार्थाद्वा हु इत्येतस्य निष्पत्तिरिति स्कन्दस्वामी।

इन बातों की अन्य प्रमाण और भी है कि स्कन्दस्वामी प्राचीन वेदभाष्यकार हैं। 14वीं शताब्दी के विद्वान देवराजयज्वा ने अपने निघण्टु भाष्य में स्थान स्थान पर स्कन्दस्वामी का नाम अपने उद्धरण में लिया है। उदाहरण के रूप में ये पक्तियाँ आपके अवलोकनार्थ प्रस्तुत है–

1. अस्य स्कन्दस्वामी– दूरं गताभवति

नैरन्तर्येणात्मकाशादिवत् दूरेऽप्युयलब्धेर्गतिक्रियाव्यवहारः।

– निघण्टुभाष्य, देवराजयज्वा, पृ0 7

2. **छादनार्थ विशिष्टम्– इति स्कन्दस्वामी।** – वही, पृ0 12

इन दोनों पंक्तियों में एक स्थल पर 'अस्य स्कन्दस्वामी' तो दूसरे स्थल पर 'इति स्कन्दस्वामी' के रूप में देवराज यज्वा ने स्कन्दस्वामी का नाम लिया है। इन विवरणों के आलोक में हम यही कह सकते हैं कि स्कन्दस्वामी देवराजयज्वा के पूर्ववर्ती है।

मन्त्रार्थ दृष्टि

स्कन्दभाष्य द्वारा ऋग्वेद अत्यन्त विस्तृत है। भाष्य अत्यन्त सरल एवम् स्पष्ट है। अपने भाष्य की भूमिका में ही स्कन्द स्वामी ने भाष्य के प्रयोजन को स्पष्ट करते हुए कहा है–

मन्त्राणामववोद्धव्यो यतोऽर्थोऽङ्गत्वसिद्धये
ऋग्वेदस्यार्थबोधार्थमतो भाष्यं करिष्ये।।

अपने द्वारा प्रयुक्त मन्त्रार्थ पद्धति को लक्षित करते हुए आचार्य ने स्वयं कहा है–

"तत्रार्ष दैवतयोरर्थावबोध उपयुज्यमान त्वात् ते दर्शयिष्येते, न छन्दः अनुपयुज्यमानत्वादिति।" इनके अनुसार वेदार्थ ज्ञान अति आवश्यक हैं न कि केवल छंद का ज्ञान। वेदार्थ के महात्म को बताते हुए स्कन्द स्वामी ने कहा है कि पञ्चप्रकाराः मन्त्राः सन्ति–प्रैषाः, करणाः क्रियमाणानुवादिनः शास्त्र भिष्टवनादिगताः जपानुवचनादिगताश्च। प्रैषादयः चतुः प्रकारकाः मत्रां प्रयोग काले स्वार्थान् प्रतिपादयन्तः कर्मणोऽङ्गत्वं प्रति पद्यन्ते, नोच्चारणमत्रेण। एवमेषां चर्तुविद्यानां मन्त्राणामर्थो बोद्धव्य एवार्थः। अतः इन सभी आशयों के साथ मन्त्र के अर्थ के बिना प्रयुक्त नहीं किये जाने चाहिये। इस व्याख्या को पढ़ने के बाद आप यह जान सकते हैं कि स्कन्दस्वामी ने मन्त्र का अधियज्ञपरक व्याख्या प्रस्तुत किया है। स्कन्दस्वामी ने पहली बार में वेद में प्रत्येक सूक्त के आरम्भ में उस सूक्त के ऋषि तथा देवता का नाम उल्लिखित किया। अपने व्याख्या क्रम में स्कन्दस्वामी ने निघण्टु, निरुक्त, ब्राह्मण, आरण्यक इत्यादि वैदिक ग्रन्थों का उपयुक्त प्रमाण जहाँ आवश्यकता आयी वहाँ उल्लिखित किया है। इतना ही नहीं अपने भाष्य में मन्त्र के पदों में निहित व्याकरण सम्बन्धी विषय संक्षेप में निर्दिष्ट किया। इस प्रकार वेदार्थ ज्ञान के निर्धारण में स्कन्दस्वामी ने अपने नवीन कौशल का प्रतिपादन किया है। पुराण तथा इतिहास पर आधारित कई मन्त्रों की व्याख्या में स्कन्दस्वामी ने पौराणिक आख्यान का प्रयोग किया है।

इस प्रकार स्कन्दस्वामी का ऋग्वेदभाष्य अति महत्त्वपूर्ण तथा प्रमाणिक हैं। इनके भाष्य में निरुक्त ऐतिहासिक–पौराणिक, भौतिक–याज्ञिक आदि व्यख्या का सम्मिश्रण दिखाई देता है। इनके भाष्य में वैदिक धर्म का मूल स्वरूप का उद्घाटन हुआ है। इनके भाष्य का सर्वाधिक प्रमाणिक संस्करण होशियारपुर से प्रकाशित हुआ है। अब हम स्कन्दस्वामी के लेखन सम्पदा पर विचार करेंगे–

स्कन्द ऋग्भाष्य के हस्तलेख : स्कन्द के ऋग्वेदभाष्य में जो हस्तलेख अब तक मिले हैं, उनमें प्रथमाष्टक पूर्ण मिलता है। द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ और पञ्चमाष्टक के कुछ अंश ही है चतुर्थाष्टक के अन्त में लिखा है कि 32 अध्याय पर स्कन्दस्वामी का भाष्य

समाप्त हुआ इससे इतना निश्चित होता है चतुर्थांस तक तो स्कन्दभाष्य था ही।

स्कन्दस्वामी की भाष्य–विधि : आचार्य स्कन्द का ऋग्भाष्य याज्ञिक मतानुसारी है। इसके प्रत्येक सूक्त आरम्भ के भाष्य में प्राचीन अनुक्रमणियों के ऋषि और देवता के बोध कराने वाले श्लोकार्थ अथवा श्लोकों के पाद पाये जाते हैं। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि स्कन्द ने वेद–मन्त्रों के अर्थबोध में छन्द–ज्ञान की उपयोगिता को नहीं मानते। वे लिखते हैं–

न छन्दः। अनुपयुज्यमानवचनत्वादिति।

स्कन्दस्वामी के भाष्य में निघण्टु, निरुक्त, वृहद्देवता, शौनक के वचन और ब्राह्मण ग्रन्थों के प्रमाण जगह–जगह भरे पड़े है। इनके अलावा स्कन्दस्वामी ने मनुस्मृति के प्रमाण को भी अपने भाष्य में स्मरण, स्मृति तथा स्मरन्ति लिखकर अपनाया है। स्कन्दस्वामी ने चतुर्थाष्टक के अष्टामाध्याय के तीसरे वर्ग की दूसरी और तीसरी ऋचा के भाष्य में शाकपूर्ण के निरुक्त से प्रमाण दिया गया है। इससे यह सन्देह होता है कि स्कन्दस्वामी के इस भाष्य से पूर्व भी कोई ऋग्वेद भाष्य उपलब्ध था क्योंकि स्कन्दस्वामी ने बार–बार केचिद् लिखकर अपने से पूर्ववर्ती किसी भाष्य की ओर संकेत किया है। है। इस तथ्य को आप इस उद्धरण में देख सकते हैं–

केचित्तु–विशिष्ठतशब्द स्थावर वचनः जगदित्येन समुच्चीयते स्थावरं जङ्गमं च बुध्यतामिति एवम् व्याचक्षते।

प्रश्न : स्कन्द स्वामी ने ऋग्वेद–भाष्य क्यों लिखा?

उत्तर : स्कन्द स्वामी स्वयं लिखते हैं–

मन्त्राणाम् अवबोध्यो यतोऽर्थोऽगत्व सिद्धये
ऋग्वेदस्यार्थबोधार्थम् अतो भाष्यमम् करिष्ये।

जब मन्त्रों का अर्थ उसके कर्मकाण्ड के सम्पूर्णता के साथ ग्रहण करना हों तो भाष्य करने की आवश्यता होगी ऋग्वेद के अर्थ को समझने के लिए वह लिखते हैं– **एते सर्वे प्रयोगकाले स्वार्थान् प्रतिपाद्यतः कर्मणोऽगत्वप्रतिपाद्यन्ते नोच्चारणमात्रेण।** अर्थात् ये सभी मन्त्र प्रयोग के समय कर्मकाण्ड के अभिन्न अंग के रूप में उद्घाटित होते हैं केवल उच्चारण मात्र से ही नहीं। स्कन्दस्वामी के अनुसार मन्त्रों का अर्थ जानने का एकमात्र उद्देश्य है वह इस तथ्य में निहित है कि यदि मन्त्रों के अर्थ ज्ञात नहीं है तो प्रयोग के समय वे परिणाम नहीं प्रदान करेंगे। अर्थात् स्कन्दस्वामी ने यज्ञ में मन्त्रों के प्रयोग हेतु मन्त्रार्थ ज्ञान आवश्यक मानते है, उसी उद्देश्य से स्कन्दस्वामी ने भाष्य लिखा है, अब हम स्कन्दस्वामी के साथ ऋग्वेद का भाष्य करने वाले नारायण का परिचय प्राप्त करेंगे–

1.3 नारायण

आप यह पढ़ चुके हैं कि स्कन्दस्वामी के साथ ऋग्वेद पर भाष्य लिखने वाले दूसरे विद्वान नारायण थे।

ज्ञात स्रोतों पर पता चलता है कि नारायण के पिता का नाम नरसिंह था। नारायण गर्ग गोत्र में उत्पन्न हुए थे। नारायण ने स्कन्दस्वामी के साथ ऋग्वेदभाष्य लिखा था। नारायण के नाम से चार रचनाएँ प्राप्त होती है। अतः यह आशंका होती है कि शायद चार नारायण है क्योंकि विद्वानों को ये रचनाएँ भिन्न–भिन्न काल की प्रतीत होती है जिससे किस नारायण ने भाष्य लिखा था सन्देह के घेरे में चला जाता है। हमें इस

शंका का निवारण कर लेना चाहिए। इस शंका का विवरण इस प्रकार है–

नारायण नामक एक विद्वान ने भगवान देवी स्वामी के विस्तीर्ण भाष्य को देखकर आश्वालयन–श्रौतवृत्ति लिखी थी। वह स्वयं अपनी वृत्ति के प्रारम्भिक श्लोकों में लिखते हैं–

आश्वालयनसूत्रस्थ भाष्यं भगवता कृतम्।
देवस्वामिसमाख्येन विस्तीर्ण सदनाकुलम्।।3।

तत्प्रसादान्मयेदानीं क्रियते वृत्तिरीदृशी।
नारायणेन गार्ग्येण नरसिंहस्थसूनुना।।4।।

काल निर्धारण को इसके सन्दर्भ में प्रो0 भगवदत्त जिन्होंने 20वीं शताब्दी में वैदिक साहित्य का इतिहास लिखा, वे कहते हैं कि यह नारायण कितना पुराना हैं? यह हम नहीं कह सकते। किन्तु यह नारायण गृह्य विवरणकार नारायण से पहले का होगा। गोभिलगृह्यवित्त जिसके लेखक का नाम भी नारायण हैं इस ग्रन्थ का संवत् 1583 है। इसका एक हस्तलेख पूना में रखा हुआ है। नारायण वाणभट्ट के पहले हुए थे क्योंकि कादम्बरी कथा जो कि संस्कृत साहित्य की प्रसिद्ध कथा है। इस कथा के प्रारम्भ में जो मंगल श्लोक हैं वह मंगल श्लोक स्कन्द के सहचर नारायण के पुत्र माधवभट्ट के सामवेदभाष्य की प्रस्तावना से लिया गया है। चूँकि माधवभट्ट ने अपने बारे में अत्यल्प लिखा है। इसी कारण से नारायण भट्ट के बारे में अधिक जानकारी नहीं मिलती। इस नारायण भट्ट के अलावा ऋग्वेद भाष्य से सम्बन्धित साहित्य में तीन और नारायण का उल्लेख मिलता है इन तीन नाम पर विचार कर लेना चाहिए ये तीनों नारायण इस प्रकार है।

1. आश्वालयन श्रौतवृत्तिकार नारायण, 2. आश्वालयन गृह्य विवरणकार नारायणतथा, 3. शांख्यायन गृह्यभाष्य कर्त्ता नारायण–आश्वालयन श्रौतवृत्तिकार नारायण ने भगवान देवस्वामी नामक विद्वान के एक बिखरे हुए व्यापक भाष्य को देखकर अपनी वृत्ति लिखा था यह बात उसके वृत्ति के प्रारम्भिक श्लोक में ही मिलता है। यह नारायण कितना पुराना है यह तो नहीं कहा जा सकता किन्तु यह नरसिंह का पुत्र तथा गर्गगोत्रीय था जिसने देवस्वामी के भाष्य के आधार पर अपनी वृत्ति लिखा है। आश्वालयनगृह्यविवरणकार नारायण श्रोत विवरणकार नारायण से भिन्न है इसने भी अपने आरम्भिक श्लोकों में अपना विवरण दिया है–

आश्वालयनमाचार्यं प्रणिपत्य जगद्गुरुम्।
देवस्वामिप्रसादेन क्रियते वृत्तिरीदृशी।।

इसने भी अपनी वृत्ति देवस्वामी के भाष्य के आधार पर लिखी थी विवरण की समाप्ति पर जो दो श्लोक इसने लिखी है उन श्लोकों के आधार पर ये दिवाकर शर्मा के पुत्र थे। इन श्लोकों के आधार पर यह भी लगता है कि गृह्यविवरणकार नारायण श्रौत विवरणकार नारायण से अर्वाचीन (बाद के) हैं पारास्कर गृह्य पर अपनी कारिका लिखने वाले रेणुदिक्षित ने कारिका में अपनी तिथि 1188 शक देता है और वह सीमन्तोन्नयन संस्कार के प्रसंग में लिखता है कि–

सीमन्तोन्नयनं कर्म न स्त्रीसंस्कार इष्यते।
केचिच्च गर्भसंस्कारादूर्भे गर्भे प्रयुञ्जते।।
स्त्रीसंस्कार समाख्यातादिति नारायणोऽब्रवीत्

अर्थात् कई ग्रन्थकार गर्भ समय सीमन्तोन्नयन मानते हैं वे इसको स्त्री संस्कार नहीं मानते, परन्तु नारायण इसको स्त्री संस्कार ही मानते हैं तथा इसके प्रति गर्भ में सम्पादन करना आवश्यक नहीं। रेणुका यह संकेत आश्वलायन गृह्यविवरणकार नारायण के लिए है। शाखांयन गृह्य भाष्य का कर्त्ता नारायण ने 1629ई0 में अपना यह भाष्य लिखा था।

इस प्रकार हम देखते है कि नारायण नाम के तीन व्यक्ति मिलते हैं इन तीनों के काल भिन्न–भिन्न है किन्तु जहाँ तक स्कन्दस्वामी के साथ मिलकर भाष्य लिखने वाले नारायण की बात हैं, तो वह श्रोतवृत्तिकार नारायण ही है। ऋग्वेद के माधव नामक चार भाष्यकारों का उल्लेख प्राप्त होता है जिन्होंने ऋग्वेद का भाष्य किया। इनमें एक का सम्बन्ध सामवेद से तथा शेष का सम्बन्ध ऋग्वेद से है। एक माधव तो सायणाचार्य ही हैं और दूसरे माधव वेंकटमाधव। एक अन्य माधव की प्रथम अष्टक की टीका मद्रास से प्रकाशित हुई है। यद्यपि यह टीका अल्पाक्षर हैं, किन्तु मन्त्रों के अर्थ ज्ञान के लिए अत्यन्त उपयोगी है जैसा कि सभी भारतीय आचार्यों ने इस नैतिक अभिमुखता को धारण किये रहते हैं कि कोई भी ग्रन्थ–रचना, निर्माण या व्याख्या उनकी व्यक्तिगत उपलब्धि नहीं है अतः उस ग्रन्थ में वे अपना परिचय या तो अति अल्प देते हैं या बिल्कुल ही किसी प्रकार का परिचय चिन्ह नहीं छोड़ते किन्तु उनके परवर्त्ती आचार्यों के द्वारा ही हम उनके बारे में जानकारी प्राप्त कर पाते हैं इसी विधि से हम स्कन्दस्वामी नारायण तथा उद्गीथ का परिचय जान सकें है।

प्रश्न : इस बात का क्या प्रमाण है कि स्कन्दस्वामी तथा नारायण दोनों ने भाष्य किया और इनके भाष्यों में क्या अन्तर है?

उत्तर : स्कन्दस्वामी, नारायण तथा उद्गीथ के परम्परा ने वेदों की शुद्ध कर्मकाण्ड परक व्याख्या की है। इन्होंने अपने वेदार्थ परम्परा में ब्राह्मण ग्रन्थ, पाणिनी के अष्टाध्यायी, यास्क की निरुक्त तथा महाभारत, पुराण, इतिहास, दर्शन आदि का सहारा लिया, उदाहरण के लिए एक मन्त्र लेते है–

इन्द्रं वयं महाबन इन्द्रमभें हवामहे, यजुंवृत्रेषु वज्रिणम्। – ऋ0 1.7.5

इस मन्त्र का स्कन्दस्वामी ने भाष्य इस प्रकार किया है–

महावने संग्रामनामैतत्। महति संग्रामे। इन्द्रम एव अर्थे अल्पनामैतत्। अल्पे। नव। पूर्वत्र निर्देशात् संग्राम एवम् हवामहे आह्वायामः। युजम् यज्यतेऽसाविति युक्त सहायः तम्। वृत्रेषु संगाम व्यतिरिक्तेष्वपि च शत्रुषु इन्द्रमेव समाह्वयामः वज्रिणम्।।

तथा इसी मन्त्र का भाष्य वेंकटमाधव ने इस प्रकार किया है–

इन्द्रम् वयम् महति संग्रामे दवामहे,
इन्द्रम् अल्पे च सहायम् उपद्रवेषु आयुधवन्तम्।

हमने आपके सम्मुख दोनों भाष्यकारों की व्याख्या का एक नमूना प्रस्तुत किया है आप इसका अध्ययन कर स्वयं ही इनके भाष्य का वैशिष्ट्य जान सकते हैं। अब हम उद्गीथ के बारे में पढ़ेंगे–

1.4 उद्गीथ

जिस आचार्य उद्गीथ ने भी स्कन्दस्वामी के साथ मिलकर ऋग्वेदभाष्य किया था। उनके बारे में हमें जानकारी उन्हीं के भाष्यों से प्राप्त होता है। अपने ऋग्वेदभाष्य के अध्यायों की समाप्ति पर उन्होंने निम्नलिखित प्रकार से वाक्य लिखा है जिसके आधार

पर हम उनके बारे में जान सकते हैं–

वनवासी विनिर्गताचार्यस्य उद्गीथस्य कृता
ऋग्वेद भाष्ये चतुष्पञ्चाशोऽध्यायः समाप्तः।।

यह उद्गीथ अपने को वनवासी कहते हैं।

प्रश्न : तो स्कन्दस्वामी तथा उद्गीथ का सम्पर्क कैसे हुआ?

उत्तर : स्वाभाविक है कि स्कन्दस्वामी तो वल्लभी के निवासी थे, ऐसे में यह अनुमान किया जा सकता है कि या तो वनवासी शब्द वल्लभी निवासी का टूटा हुआ पाठ हो या विनिर्गत अर्थ युक्त हो। अर्थात् कहीं बाहर से आकर वल्लभी में रहने वाले आचार्य। उद्गीथ को भाष्य से यह अर्थ प्राप्त कर सकते हैं। इसके अलावा हमें आचार्य उद्गीथ के बारे में और अधिक जानकारी प्राप्त नहीं होता। अतः अब उद्गीथ के भाष्य के बारे में चर्चा की जाय।

1. उद्गीथ का भाष्य

उद्गीथ का भाष्य स्कन्दभाष्य के समान याज्ञिक पद्धत्यनुसार पूरे विस्तार से लिखा गया है। परन्तु सूक्तों के आरम्भ में स्कन्द के समान उद्गीथ भार्षानुक्रमणी को उद्धृत नहीं करता। वह तो ऋषि देवता सम्बन्धी ज्ञान अपनी संस्कृति में लिखकर ही संतुष्ट रहते है। इनके द्वारा लिखित निम्नलिखित ग्रन्थ प्राप्त होते हैं–

1. **ऋग्वेदभाष्य :** स्कन्दस्वामी ने यह ग्रंथ नारायण तथा उद्गीथ के साथ मिलकर रचा था।

2. **शतपथ भाष्य :** देवराज यज्वा जिन्होंने यास्क के निघुण्टु पर भाष्य किया है स्कन्दस्वामी के इस भाष्य का कई बार उल्लेख किया है।

   स्कन्दस्वामी विरचित टीका का सम्पादन और लक्ष्मण स्वरूप ने अनेक हस्तलेखों के आधार पर बड़े परिश्रम से पहली बार तीन भागों में किया है। प्रथम भाग में निरुक्त के प्रथम अध्याय की द्वितीय भाग में द्वितीय अध्याय के षष्ठ अध्याय की तथा तृतीय भाग में सप्तम अध्याय से तेरहवें अध्याय तक की व्याख्या है। इस टीका में सातवीं तथा आठवीं शताब्दी के विद्वानों के उद्धरण भी मिलते हैं, क्योंकि इस टीका में 12वीं शताब्दी ईस्वी के पश्चात् के महेश्वर नामक किसी विद्वान् ने थोड़े संशोधन के साथ स्कन्दस्वामी के वृत्ति का दूसरा संस्करण प्रस्तुत कर दिया था। उद्गीथ ने भाष्य के अष्टकक्रम को छोड़कर अध्याय क्रम को अपनाया। उद्गीथ की भाष्यशैली भी स्कन्द स्वामी की भाष्य शैली ही है। अनेक मन्त्रों की व्याख्या में वेदार्थ की याज्ञिकी पद्धति को अङ्गीकृत किये हुए हैं। स्कन्दस्वामी के अनुसार ऋषि तथा देवता के विवरण को उद्गीथ ने अपने भाष्य में ब्राह्मण, ग्रन्थ, आरण्यक ग्रन्थ तथा उपनिषदों से प्रमाण रूप में उद्धृत किया है यहाँ पर निरुक्त का भी उपयोग उन्होंने किया है। जहाँ तहाँ भाष्यकार ने वृहद्देवता के प्रसंगों का भी स्मरण किया है तथा व्याकरण विषयक विवेचन को भी संक्षिप्त रूप में लिखा है। इन सभी कारणों से उनका भाष्य प्रामाणिक बन गया है।

इसके अलावा भी उद्गीथ भाष्य में अनेक विशेषताएँ पायी जाती हैं, इनके भाष्य की स्पष्टता, प्रवाहमयता, नवीनता, अर्थगत विविधता तथा उल्लेखनीयता इत्यादि महत्त्वपूर्ण है। एक ही सूक्त के दो मन्त्रों में प्रयुक्त 'सप्त' शब्द का अर्थ भिन्न–भिन्न प्रदान किया है। वह मन्त्र इस प्रकार है। इसका अवलोकन करें–

1. **सप्त स्वसृः भगिनीभूता; तदग्ने र्जातत्वात्।**
2. **सप्त मर्यादाः व्यवस्थिता अलङ्घनीयाः।**

समानार्थ पदों के प्रयोगों के औचित्य का निर्धारण करते हुए वे लिखते हैं–

विप्रः समानार्थ शब्दाभ्यासे भूयांसमर्थ मन्यन्ते। अत्यन्तमेधावीत्यर्थः।

इस प्रकार उद्गीथ का अर्थ वैविध अनके उदाहरण में वेदार्थनुशीलन प्रक्रिया में उद्गीथ का अवदान थोड़ा होते हुए भी बहुत महत्त्वपूर्ण है।

1.4.1 उद्गीथ का मन्त्रार्थ दृष्टि

उद्गीथ का भाष्य स्कन्दस्वामी के भाष्य के समान याज्ञिक पद्धति के अनुसार पुरे विस्तार से लिखा गया है। परन्तु सूक्तों के प्रारम्भ में स्कन्द के समान उद्गीथ नुक्रमणी उद्धृत नहीं करते वे केवल ऋषि देवता सम्बन्धी ज्ञान संस्कृत में लिखकर छोड़ देते हैं।

उद्गीथ के भाष्य के आधार पर मैक्समूलर द्वारा सम्पादित ऋक् सायण भाष्य को शुद्ध करने में सहायता प्राप्त होती है। उदाहरण के लिए जैसे ऋग्वेद 10/8/5 पर भाष्य करते हुए उद्गीथ लिखता है–

ऋताय उदकार्थे भौमरसलक्षणस्योदकस्या दानार्थम्।

मैक्समूलर सम्पादित सायण पाठ इस प्रकार है– **ऋताय सोमरसलक्षणस्योदस्यादानार्थम्।** अब यहाँ विचारणीय है कि जल भौमरस लक्षण तो हो सकता है परन्तु सोमरस लक्षण नहीं। अतः सायणभाष्य का मैक्स मूलर भाष्य शुद्ध किया जाना चाहिए। देवराज यज्वा ने भी निघण्टुभाष्य में उद्गीथ प्रदर्शित पाठ का ही समर्थन करता है।

सायणभाष्य जहाँ–जहाँ त्रुटित अथवा दूषित हो गया है वहाँ उद्गीथ भाष्य की सहायता से पाठ जाने जा सकते हैं।

ऋग्वेद 10/20/8 के पश्चात् उद्गीथ भाष्य में सूक्तों का एक नया विभाग है। उद्गीथ एक बहुगत तथा उर्वरा शक्ति से परिपूरित विद्वान् है। चूंकि उद्गीथ ने ऋग्वेद का सम्पूर्ण भाष्य नहीं किया इसलिए उनके बारे में कोई ठोस निर्णय पर जाना कठिन है किन्तु वेद के जितने भाग पर उन्होंने भाष्य किया उसमें निःसंदेह व अर्थवैविध्य तथा अर्थकौशल प्रदान करते हैं।

1.4.2 उद्गीथ की भाष्य–पद्धति

स्कन्द स्वामी की व्याख्या पद्धति को ही उद्गीथ भी अपनाते है किन्तु इन दोनों में एक अन्तर यह है कि उद्गीथ, स्कन्द के समसान आर्षानुक्रमणी को नहीं स्वीकार करते। उद्गीथ मन्त्र संख्या, देवता तथा ऋषि की सूचना देने के साथ आगे बढ़ जाते हैं।ऋग्वेद पर भाष्य करते हुए उद्गीथ ने उसे प्रमाणों से पुष्ट किया है तथा जिसका भाष्य करते हैं उसी से प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। ऋग्वेद पर भाष्य करते हुए भाष्य के पक्ष में ऋग्वेद से प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। इसके अतिरिक्त उद्गीथ ने अष्टाध्यायी, निरुक्त, निघण्टु, उपनिषद् तथा गी आदि से प्रमाण प्रस्तुत किया है।

इसके अतिरिक्त शब्दों की व्याख्या में वे आख्यातजत्व को स्वीकार किया है। तथा पर्यायवाची शब्दों द्वारा वे अपने भाष्य में वेद के अर्थवैविध्य को स्पष्ट करते हैं।

उद्गीथ की एक और विशेषता है कि वे वेद के मन्त्रों में इतिहास तथा पुराण के शब्दों का इतिहास का विषय मानते हुए व्याख्या की है। उद्गीथ कहीं कहीं इतिहास का अर्थ लेते हैं तथा कहीं कहीं वे उससे भिन्न भी अर्थ ग्रहण करते हैं।

इतना ही नहीं उद्गीथ के भाष्य में हमें कृषि विज्ञान विषयक चिन्तन भी प्राप्त होता है। उद्गीथ ने वक्षणासुः शब्द का प्रयोग प्रकृति में विद्यमान सूक्ष्म जलकण से किया है जबकि सामान्य रूप से वक्षणासु का अर्थ नदि लिया जाता है इसी प्रकार रेणुः शब्द को धूलि न लेकर पार्थिव धातु के रूप में ग्रहण किया है।

1.5 सारांश

जिस गुप्तकाल में वैदिक ज्ञान–विज्ञान चरम पर दिखाई देता है। वैदिक ज्ञान के विकास एवम् विस्तार के लिए वेद में निहित रहस्य का उद्घाटन अति आवश्यक हो गया था। वेद–रहस्यों का उद्घाटन तभी प्रमाणित माना जा सकता है जब वह व्याख्या स्वयं वेद–मन्त्रों पर आधारित हो। इस कार्य को स्कन्दस्वामी ने नारायण एवम् उद्गीथ के साथ प्रारम्भ किया है। प्रस्तुत इकाई को अध्ययन के उपरान्त आप ऋक् संहिता के ज्ञात प्राचीनतम् भाष्य का स्वरूप और उसके भाष्यकर्त्ताओं में स्कन्दस्वामी, नारायण तथा उद्गीथ के बारे में जान चुके हैं। वेद में निहित ज्ञानराशि को जनमानस तक पहुँचाने में स्कन्दस्वामी, नारायण, उद्गीथ के योगदान के बाद ऐतिहासिक रूप से जो विद्वान् हमारे समक्ष आते हैं उनमें वेंकटमाधव, आत्मानन्द, सायण तथा करपात्री जी का नाम महत्त्वपूर्ण है।स्कन्दस्वामी, नारायण तथा उद्गीथ के ऋग्वेद के भाष्य के बाद माधवभट्ट, वेंकटमाधव, उव्वट, धुनष्कयज्वा आनन्दतीर्थ तथा आत्मानन्द ने वैदिक साहित्य पर भाष्य लिखने का गम्भीर प्रयास किये यह वेद के अर्थ को जानने की द्वितीय चरण है। जिस प्रकार वेदार्थ के प्रथम चरण में यास्क का महत्त्व है उसी प्रकार वेदार्थ के इस द्वितीय चरण में सायण का महत्त्व है। 14वीं शताब्दी में सायण ने वदों तथा उससे सम्बद्ध अन्य साहित्य पर भाष्य लिखकर महनीय कार्य किया।16वीं शताब्दी के बाद वैदिक साहित्य पठन पाठन, विवेचन तथा लेखन आदि की दृष्टि से अतिमहत्त्वपूर्ण हो गया और इस विषय में विशेष तो कुछ हुआ ही नहीं, जो पहले था उसके भी नष्ट–भ्रष्ट होने की स्थितियाँ बन गयी और बहुत कुछ नष्ट–भ्रष्ट हो भी गया।

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

वेद व्याख्या : इसका अर्थ है कि ऋषि कवि की अन्तश्चेतना के वे अनुभव जो श्रुति परम्परा से प्रवाहवान होते हुए संहिता, ब्राह्माण्ड आरण्यक तथा उपनिषद् के रूप में समन्वित हुई। इस ज्ञान राशि की पुर्नसष्टि करना।

ब्राह्मण ग्रन्थ : वेद का संहिता भाग काव्य प्रतीकों के माध्यम से ज्ञान का संचरण करता है। वैदिक काव्य के इस प्रतीकात्मक स्वरूप की व्याख्या वैदिक साहित्य का जो भाग करता है उसे ब्राह्मण ग्रन्थ कहा जाता है। ब्राह्मण ग्रन्थ मुख्यतया यज्ञ से सम्बद्ध है। यज्ञों के सन्दर्भ में जो आद्य प्रारूप या आर्ष दृष्टि वैदिक आख्यान में रहती है उसी को ही ब्राह्मण ग्रंथ अनुष्ठान के व्यापारात्मक अभिकल्प के रूप में प्रस्तुत करता है।

निरुक्ति : निरुक्ति शब्द की मूल रूपात्मकता तथा मिथकीय स्वरूप को प्रत्यक्ष करता है। दुसरे शब्दों में निरुक्ति हमें उस संज्ञानात्मक मानसिक व्यापार तक ले जाती हैं जो नामकरण की प्रक्रिया में अर्न्तभावित है।

वेदाङ्ग : कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, शिक्षा एवम् ज्योतिष रूप में वेदाङ्ग देवकाव्य के स्वरूप तथा उनके अर्न्तनिहित तत्त्वों तथा उससे सम्बन्धित ज्ञान की रक्षा करते हैं।

तन्त्रशास्त्र : यह आगमिक परम्परा के ग्रन्थों के अन्तर्गत आता है। इस ग्रन्थ में दर्शन, कर्मकाण्ड एक दुसरे से जुड़े हुए रहते हैं।

निरुक्तशास्त्र : वैदिक शब्दों का निर्वचन करने वाले शास्त्र निरुक्त कहलता है। कोई शब्द किसी वस्तु के लिये क्यों प्रयुक्त होता हैं इस पर विचार निरुक्तशास्त्र में किया जाता है। महर्षि यास्क का 'निरुक्तशास्त्र' प्रसिद्ध है।

अनुक्रमणी साहित्य :

अष्टक : वेद सम्पादन का प्रकार है। ऋग्वेद को आठ अष्टक में विभाजित किया गया था। ऋग्वेद के विभाजन के एक प्रकार है, जिसमें सूक्त अनुवाक तथा मन्त्र पाये जाते है।

अधियज्ञ : देवताओं के लिये किये जाने वाला यज्ञ अधियज्ञ कहा जाता है।

पौराणिक आख्यान : वैदिक कथाओं की ही तरह पौराणिक आख्यान है जो आख्यान विभिन्न पुराणों में वर्णित है उन्हें पौराणिक आख्यान कहा जाता है।

वाणभट्ट : संस्कृत साहित्य के प्रसिद्ध गद्यलेखक इन्होंने कादम्बरी कथा लिखी है जो संस्कृत साहित्य की अमूल्य निधि है।

1.7 संस्तुत पुस्तकें

1. श्री डा. मीनाक्षी श्रीवास्ताव : श्री सायणाचार्य एवम् पाण्डित श्रीपाद सातवलेकर कृत वेदभाष्यों का तुलनात्मक अध्ययन, नाग पब्लिशर्स, 2006
2. प्रो. ज्ञानप्रकाश शास्त्री : ऋग्वेद के भाष्यकार और उनकी मन्त्रार्थ दृष्टि, महर्षि सान्दीपनी राष्ट्रीय वेदविद्या संस्थान, उज्जयिनी
3. श्री अरविन्द : वेदरहस्य, भाग.1 एवम् भाग.2 श्री अरविन्द आश्रम, पॉण्डिचेरी
4. आचार्य बलदेव उपाध्याय : वैदिक साहित्य का इतिहास, शारदा मन्दिर, वाराणसी
5. वैदिक साहित्य का इतिहास, भगवद्दत्त

1.8 बोध प्रश्न

1. ऋग्वेदभाष्यकार के रूप में स्कन्दस्वामी का व्यक्तित्त्व एवम् कृतित्त्व का निर्धारण किजिये।
2. ''स्कन्दस्वामी, नारायण तथा उद्गीथ तीनों मिलकर भाष्यकार्य किये थे'' इस कथन की पुष्टि कीजिए।
3. स्कन्दस्वामी, उद्गीथ तथा नारायण के भाष्य की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।